भगवत् कृपा

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संग पत्रिका

वर्ष 19 अंक : 4 | शुक्रवार, 26.4.1996 | वार्षिक चंदा : 50.00

आया... प.पू. स्वामिजी की जयंती का महामंगलकारी दिन !

समग्र गुणातीत समाज के लिए एक महामंगलकारी अवसर नज़दीक आ रहा है.... 4 मई–प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी की जयंती ! पूर्व की आत्माओं को झकझोर कर जाग्रत करने और मुक्तों को अक्षरधाम के सुख की सच्ची सूझ देने हर युग में प्रभु मानवस्वरूप में धरती पर स्वयं या ऐसे ब्रह्मस्वरूप संतों द्वारा एक सामान्य व्यक्ति की तरह जन्म लेकर आते हैं... उनका हंसना, बोलना, चलना, बैठना, सोना आदि सभी क्रियाएं सामान्य व्यक्ति जैसी ही लगती हैं। पर, वे प्रभु जितने ही समर्थ होते हैं और प्रभु को धारकर प्रभु में से आई प्रेरणा लेकर वे हर चैतन्य के विकास के लिए हर क्रिया करते हैं..... जानवर व इन्सान के वर्तन में जैसा गहरा फर्क होता है.... वैसा फर्क सामान्य व्यक्तियों और प्रभुधारक ऐसे संत के बीच होता है...

हम सब खूब भाग्यशाली हैं कि गुरुहरि योगीजी महाराज ने ऐसे प्रगट ज्योति स्वरूपों के साथ हमारी प्रीति करा दी, उनके जोग में हमें रख दिया... स्वामी की बातों में लिखा है कि कोटि जप, कोटि तप, कोटि यज्ञ जैसे अनंत साधन करने के बाद भी भगवान व संत की जो प्राप्ति नहीं हो, ऐसी अद्‌भुत प्राप्ति हमें हुई है।

यह संभव है कि इस धरती पर हमें सब कुछ मिल जाये। लक्ष्मी मिलेगी, समृद्धि मिलेगी, मान-बड़प्पन मिलेगा, बेटा-बेटी मिलेंगे, समाज मिलेगा, व्यवस्था मिलेगी-इस प्रकार शायद सभी कुछ मिल जायेगा, परन्तु भगवान धारे पवित्र, निर्मल संत की गोद नहीं मिलेगी और यदि ऐसे संत की गोद मिल गई तो अपना जीवन धन्य हो गया। इस लोक व परलोक में अपना आखिरी जन्म ! जन्म-मरण के गर्भवास के भयंकर रोग की पूर्णाहुति.....

और इससे भी अधिक गुणातीत स्वरूपों की कैसी अनहद् कृपा कि वे स्वयं मानव कक्षा की मर्यादा में ही रहकर हमें जीकर बताते हैं, ताकि हमें ऐसी शंका ही ना रहे कि यह तो केवल ऐसे स्वरूप ही कर सकते हैं... प.पू. काकाजी के जीवन में हम सभी ने देखा कि गुरुहरि योगीजी महाराज को प्रभु का ही स्वरूप मानकर उन्होंने किस प्रकार अपना कुछ भी प्रिय ना रखकर हमेशा हर आज्ञा सिर माथे रखकर अहोभाव से सेवा करी। प.पू. स्वामिजी ने भी बापा की ऐसी सेवा करके कितना अधिक उनको प्रसन्न कर लिया होगा-वह गुरुहरि योगीजी महाराज द्वारा लिखे निम्न पत्र से स्पष्ट पता चलता है और योगी बापा व प.पू. स्वामिजी के एक सर्वोत्कृष्ट गुरु-शिष्य के संबंध का अद्‌भुत दर्शन होता है।

स्वामिश्रीजी सत्य हैं

ब्र.स्व.-स्वामिश्री योगीजी महाराज का
श्री अक्षर मंदिर, गोंडल (सौराष्ट्र) से

हरिप्रसादस्वामी को पत्र.....

''परम भगवदी, परम एकांतिक हरिप्रसादस्वामी नये 4 संतों.... हे हरिप्रसादस्वामी आपने मेरी सेवा अनुवृत्ति पालकर खूब राजी किया है, सो बार-बार तुम्हें याद करता हूं। तुम्हारी पत्र लिखने की सेवा, तुम्हारी देख-रेख देखकर सारे देश में याद करते हैं। पत्र व्यवहार विभाग, सेवा-सरभरा का विभाग, मोटर में बिठाने-करने के कारोबार का विभाग, बातें करने का विभाग, युवकों को सही दिशा दिखाकर ज्ञान देने का विभाग,

निर्दोबुद्धि का विभाग, आनंदमय जीवन विभाग वगैरा बहुत सारे विभाग आपने संभाले थे। याद करता हूँ और कोई सेवा देता, वह संभाल कर आप गोंडल पहुँचा देते-वगैरा का भी आपने काम किया है। तारीफ करने के लिए नहीं, पर स्मृति के लिए है। सो, आप प्रसन्न रहना और सभी चार नये संतो को बुलाकर बात करना। सभी को बल मिलेगा।''

प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी स्वयं तो ऐसा जीवन जीए ही और आज देश-विदेश के हजारों के जीवन के प्राणाधार बनकर संबंध में आए चैतन्यों के लिए दिन-रात अत्यधिक परिश्रम करके, कथावार्ता करके, अनोखी सूझ लेकर प्रभु भजने के रास्ते पर spiritual master बनकर अग्रसर कर रहे हैं... और आज उनकी कथावार्ता दौरान एक-एक शब्द जैसे–सुरूचि, ज्ञान, निर्दोषबुद्धि, सरलता, सेवा, दासत्व इत्यादि पर भार देकर इतना अधिक सचोट समझाते हैं कि वह दिलो-दिमाग पर छा जाए और वह लेकर-समझकर यदि हम चलने लग पड़े तो बेचैनी, उदासी, घुटन जैसे शब्द हम से मीलों दूर रहें.. पर वस्तुतः बहुत बार हमारे समझने में-cable में कुछ leakage होता है। जैसा हम कई बार 'सेवा' तो करते हैं, पर उसकी महिमा समझकर-अहोभाव से नहीं करते। सो, हमारी सेवा 100% प्रभु को पहुंचती ही नहीं। हमारी वृत्तियों के देवता ही वह खा जाता है-जाग्रतता नहीं रहती... वर्ना उस सेवा के फलस्वरूप हमारे भीतर में शांति होनी चाहिए। वही सही अर्थ में 'सेवा' है। ऐसे भगवत्स्वरूप संत के संबंध में आने के बाद 'सेवा' शब्द बहुत अर्थ रखता है। अब तक केवल स्थूल सेवा पर ही अधिक जोर दिया जाता था... पर प.पू. स्वामिजी ने 'सेवा' के अनेक पहलू अपनी एक कथावार्ता में हम सभी पर खूब कृपा करके बताए हैं... तो आईए, प.पू. स्वामिजी की जयंती के अवसर पर 'सेवा' के उन मुद्दों को पढ़कर, मनन करके उनकी ओर अग्रसर होने कृतनिश्चयी बने.....

सेवा

★ सभी शास्त्रों का एक ही रहस्य है.... सार का सार एक ही है... मन-कर्म-वचन से भगवान और भक्तों की करी हुई सेवा-वही जीव का जीवन है।

★ भगवान के भक्तों की सेवा करनी वही जीवनडोरी है।

★ जिस भाव से सेवा हो जाए, वह भाव हृदय में प्रगट हो जाता है।

★ निर्दोषबुद्धि जैसी कोई सेवा नहीं।

★ सेवा का अंग कई मुक्तों में होता है, लेकिन वह सेवा यदि सुहृद्भाव की पुष्टि नहीं करती हो तो वह सेवा वृत्ति के अधीन हुई है और मान का पोषण करती है।

★ माहात्म्यज्ञानसहित सेवा-वह जीव का जीवन है।

★ 'सेवा' जीव का जीवन बने तो बड़े पुरुष की प्रसन्नता मिले, स्मृति सहज बने और अंतर से सुखी हो जाएं।

★ जहां स्वामी रखें, वहां किसी भी प्रकार की फरियाद करे बिना आनंद में रहना-वह सच्ची सेवा है।

★ सेवा के लिए ताकत की जरूरत नहीं, उमंग की जरूरत है।

★ सेवकभाव से करी सेवा ही प्रभु स्वीकारते हैं।

★ सेवा में ही सरलता समाई है। सेवा में ही मातृत्व समाया है।

★ दास का दास होकर जो सेवा करे उसमें धर्म, ज्ञान, वैराग्य, भक्ति आदि कल्याणकारी गुण दिन-प्रतिदिन बढ़ते जाते हैं।

★ भक्तों की चरणरज बनकर सेवा करें, तो लुट जाने का भय ही नहीं।

★ अप्रतीम रांकभाव-गरीबी से करी सेवा लूटी नहीं जायेगी।

★ सेवा करने वाले तो हज़ारों हैं लेकिन प्रभु के होकर, उनकी मर्जी के मुताबिक, उनकी पसंद की सेवा करनी, वह कोई बात अलग ही है।

★ सेवा से.....
- अंतःकरण शुद्ध हो जाए।
- जीव में हर प्रकार का बल आए।
- दरिद्र हो तो धनवान बने।
- विनम्रता आए, सहज स्मृति रहे।
- हर प्रकार के मेवा मिले।
- आत्मीयता बढ़े।
- अंतर में शांति रहे।
- सभी प्रकार से फायदा।

★ सेवा का फल-
सेवा शब्द में ऐसा माधुर्य है कि जिसमें अपेक्षा या अन्य कोई बोझ या भाव रह सकता नहीं।

★ सेवा किस प्रकार से करनी या तो सेवा भक्तिरूप बनी कब कही जाये?
- सेवा दिखावे के लिए या दूसरों के सर्टीफिकेट के लिए नहीं होनी चाहिए।
- सेवा अहोभाव से होती रहे।
- सेवा प्रभु की प्रसन्नता के लिए होती रहे।
- 'सेवा'-प्रभु के स्वरूपों की ही है, ऐसे भाव से हुआ करे।
- सेवा ब्रह्मरूप भाव से होती रहे।

- इस प्रकार (वच. ग.म. 41 के मुताबिक) यदि सेवा हो, तो जीवन बिना साधन के सुखी हो जाए ही। निर्वासनिक हो जाए।

★ सेवा में विघ्न....
- जब तक आत्मीयता से आपसी हकदावा नहीं बनता तब तक प्रभु तुम्हारी सेवा स्वीकार नहीं सकते।
- सेवा करने में तीन चीज़ें बाधारूप हैं।
(1) प्यारी वस्तु, (2) आलस-देहभाव, (3) बुद्धि

★ सेवा में-
- देह की विस्मृति हो.....
- मन में प्रभुस्मरण हो.....
- दृष्टि में मूर्ति हो.....
तो सच में सेवा हुई कहलाए।

★ सेवा का मूर्तिमान स्वरूप यानि योगीजी महाराज। यदि बापा को पहचाने, तो कल्पना से परे का सेवामार्ग सहज ही समझ में आ जाए।

✡✡✡✡✡

स्वामी की बातें

499 प्रगट मूर्ति के सिवा अन्य किसी में माल नहीं.....

प्र-5, 326

500 भगवान की स्मृति रखनी, यह सबसे अधिक है। भगवान तो हमारे जीव में बैठे ही हैं। वे देह छोड़ते समय दिखाई देते हैं। जिसे स्मृति रहे, वह तो सभी साधन के अंत को पा चुका समझना। इस बारे भरतजी की बात करी।

प्र-5,327

501 शुद्धि के लिए तप और अनुवृत्ति, ये दो साधन हैं। उसमें अनुवृत्ति-वह अधिक है। वह करते-करते आत्मा और परमात्मा दो ही रखने हैं।

प्र-5,328

502 हमें ज्ञान सीखना तो आता ही नहीं और वैराग्य तो है नहीं, सो मैं भगवन का और वे मेरे-यूं मानना। लगाव तो पंद्रह आना स्त्री में है और एक आना हमारे में है। कल्याण तो उनकी शरण में आये सो व वे समर्थ हैं, इसलिए वे करेंगे। यह उनका बड़प्पन है।

प्र-5,330

503 खाली हों तो भगवान की मूर्ति लेकर-धारकर बैठना। वह मूर्ति यानि क्या? तो भगवान की कथावार्ता और ध्यान-भगवान की मूर्ति है।

प्र-5,331

504 देह है, सो निद्रा, काम, स्वाद, लोभ-ये सभी देह के साथ होते हैं। सो उन्हें तो देह के साथ ही रहने देना। कोई व्यसन रखता है, अफीम-हुक्के का स्वाद रखता है, लोभ रखता है, ये सभी सुख जैसे लगते हैं, लेकिन ये तो देह को दुःख दे ऐसे हैं।

प्र-5,332

505 भगवान भजने में तीन विघ्न हैं, एक तो लोक का कुसंग, सत्संग में कुसंग और इन्द्रियों अंतःकरण का कुसंग। सो इन सभी के बहकावे में आना नहीं। सत्संग में यदि कुसंग का योग हो जाए तो ब्रह्मरूप हो उसे भी देहरूप कर डाले और स्तसंग में अच्छे संग का योग हो जाए, तो जो देहरूप हो उसे ब्रह्मरूप कर दे।

प्र-5,333

506 बातें करने से मक्खी में से सूर्य हो और सूर्य में से मक्खी हो, यदि बातें करनी आती हों तो। बात की बात बड़ी करामत है। यह सारा सत्संग बातों से हुआ है और यह सब कुछ बातों से है और कुछ नहीं।

प्र-5,335

507 सत्संग, साधु और भगवान जैसे मिले हैं, वैसे पहचाने नहीं जाते और मनुष्यभाव रहता है। जैसा लाभ हुआ है, वैसा लाभ पहचाना भी नहीं जाता। मनुष्यभाव में दिव्यभाव है, वह माना नहीं जाता। व्रत करते हैं, पर यह समझ नहीं पायेंगे; क्योंकि जड़ ही नहीं है तो शाखायें कहां से होंगी?

प्र-5,337

508 मुक्त हो, उस पर किसी का प्रभाव नहीं पड़ता और संघर्ष करा करता है, परन्तु संकल्प की पकड़ में फंसता नहीं।

प्र-5,341

509 हर एक को अपनी देह अच्छी लगती है, गांव अच्छा लगता है, देश अच्छा लगता है-यही तो दैव की माया का बल है।

प्र-5, 342

नम्र विनती

अनिर्देश से प्रकाशित होती 'भगवत् कृपा' सत्संग पत्रिका आपको प्रतिमास मिलती ही होगी। इस पत्रिका द्वारा आपको अनिर्देश की गतिविधियों का तो पता चलता ही होगा, साथ ही आत्मा की खुराक के रूप में आध्यात्मिक सूझ भी प्राप्त होती होगी। इस मासिक पत्रिका द्वारा हमारी यही कोशिश है कि जीव भगवान स्वामिनारायण प्रणीत प्रगट की युगल उपासना करके सत्संग से–सच्चे साधु से जुड़कर सदा सुखी होने की ओर अग्रसर हो। इस मासिक पत्रिका का लाभ आपको निरंतर मिलता रहे–इस हेतु सभी हरिभक्त पाठकों से विनम्र निवेदन है कि वे 'भगवत् कृपा' सत्संग पत्रिका का वार्षिक शुल्क समय पर भेजने की कृपा करें...

— वार्षिक शुल्क —

देश में	- Rs. 50
विदेश में	- U.K. £ 27
	U.S.A - $ 40

व्रतोत्सवसूची

1. दि.	29.4.96	सोमवार	– एकादशी, व्रत
2. दि.	2.5.96	गुरुवार	– नृसिंह जयंती, फराली व्रत
3. दि.	4.5.96	शनिवार	– प्र.ब्र.स्व. प.पू. हरिप्रसादस्वामिजी की जयंती
4. दि.	13.5.96	सोमवार	– एकादशी, व्रत
5. दि.	14.5.96	मंगलवार	– ब्र.स्व. योगीजी महाराज का प्रागट्य दिन
6. दि.	15.5.96	बुधवार	– 'अनिर्देश' में आज से एक माह के 'जपयज्ञ' का प्रारम्भ रोज़ सुबह 6.30 से 8.00

PUBLISHED BY PRABHAKAR RAO FOR YOGI DIVINE SOCIETY-DELHI
'ANIRDESH' Kakaji Lane, Swaminarayan Marg, Ashok Vihar-III, Delhi-110052 (India) Tel.: 7229327, 7249327
Printed at : **Chowdhry Mudran Kendra** 12/3, Sri Ram Marg, South Maujpur, Delhi-110 053